आयकर आयुक्त आंध्र प्रदेश, हैदराबाद।

बनाम

आंध्र प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम, हैदराबाद।

7 मार्च, 1986

(वी. डी तुलजापुरकर, एवं डी.पी. मेडॉन जे.जे.)

भारतीय आयकर अधिनियम, 1922- धारा 4(3)(i) एवं स्पष्टीकरण तथा आयकर अधिनियम 1961- धारा 2(15) एवं 11-सड़क परिवहन निगम-क्या जन-उपयोगिता के उद्देश्य(विषय) को अग्रसर करने में संलग्न है, लाभ के लिये गतिविधि चलाने में शामिल नहीं है- क्या आयकर से छूट प्राप्त है।

सड़क परिवहन अधिनियम, 1950

धारा 22, 23, 28 व 30- आंध्रप्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम-की गतिविधियां- क्या लाभ के लिये संचालित है- क्या छूट का दावा करने का हकदार है।

प्रत्यर्थी, आंध्र प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम, सड़क परिवहन अधिनियम, 1950 की धारा 3 के तहत स्थापित एक सड़क परिवहन निगम है। प्रत्यर्थी-निगम की स्थापना से पूर्व आंध्र प्रदेश राज्य में सड़क परिवहन सरकार का ही विभाग था जो आंध्र प्रदेश राज्य की स्थापना से पूर्व हैदराबाद सरकार द्वारा संचालित था तथा इसके पश्चात आंध प्रदेश सरकार द्वारा। इस पूरी अवधि के दौरान सड़क परिवहन से होने वाली आय आयकर से छूट प्राप्त थी। प्रत्यर्थी-निगम के गठन के पश्चात आयकर विभाग का यह मत था कि प्रत्यर्थी-निगम की आय आयकर के दायित्वाधीन है अतः कर निर्धारण वर्ष 1958-59 तथा 1959-60 हेतु प्रत्यर्थी-निगम का आयकर हेतु निर्धारण किया।

प्रत्यर्थी-निगम में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय में एक रिट-याचिका दायर की जिसमें कहा गया कि उसके स्वामीत्व वाली सम्पति और उससे अर्जित होने वाली आय संविधान के अनुच्छेद 289(1) के तहत केन्द्रीय कराधान से छूट प्राप्त राज्य की संपति व आय थी परन्तु इस तर्क को खारिज कर दिया गया तथा रिट-याचिका भी उच्च न्यायालय ने खारिज कर दी। इस न्यायालय ने प्रत्यर्थी-निगम द्वारा प्रस्तुत अपील भी खारिज कर दी गयी।

इसके पश्चात प्रत्यर्थी-निगम ने निर्धारण वर्ष 1960-61, 1961-62 एवं 1962-63 के सम्बन्ध में अपनी आय को शून्य दिखाते हुये रिटर्न फाइल की। कर निर्धारण वर्ष 1960-61 व 1961-62 के सम्बन्ध में आयकर अधिनियम की धारा 4(3)(i) के तहत छूट का दावा किया 1962-63 के सम्बन्ध में आयकर अधिनियम की धारा 11 के तहत छूट का दावा किया। प्रत्यर्थी-निगम के छूट के दावे को आयकर अधिकारी ने खारिज कर दिया। प्रत्यर्थी-निगम द्वारा फाइल की गयी अपील को सहायक अपीलीय आयुक्त ने स्वीकार कर लिया परन्तु विभाग द्वारा आयकर अपीलीय अधिकरण के समक्ष फाइल अपील में अधिकरण ने आयकर अधिकारी के आदेश को बहाल कर दिया। रेफरेंस में उच्च न्यायालय ने माना कि प्रत्यर्थी-निगम दावाकृत छूट का हकदार था।

राजस्व द्वारा इस न्यायालय में अपील में यह तर्क दिया कि प्रत्यर्थी-निगम उसके द्वारा दावाकृत छूट का हकदार नहीं था क्योंकि इसकी गतिविधियां लाभ कमाने के लिये संचालित थी जैसा कि सड़क परिवहन निगम अधिनियम की धारा 22, 23 व 28 से परिलक्षित होता है।

अपील खारिज करते हुये, अभिनिर्धारित किया किः-

1. प्रत्यर्थी-निगम आयकर अधिनियम 1922 व 1961 दोनों के तहत छूट प्राप्त करने का हकदार था (584 एफ)

2. प्रत्यर्थी-निगम द्वारा संचालित गतिविधि का उद्देश्य निर्विवाद रूप से सामान्य जन-उपयोगिता में से एक था। (582 जी)

3. एक सड़क परिवहन निगम से यह अपेक्षा या मांग नहीं की जा सकती है कि इसे घाटे में चलाया जाये। यह माल व यात्री परिवहन के मामलों में जनता को सब्सिडी देने के उद्देश्य से स्थापित नहीं की गयी है। सड़क परिवहन निगम की स्थापना के उद्देश्य सड़क परिवहन निगम की धारा 3 में दर्शाये गये है। धारा 18 यह दर्शाती है कि सड़क परिवहन निगम का यह कर्तव्य होगा कि वह राज्य में सड़क परिवहन सेवाओं का कुशल, पर्याप्त, किफायती तथा उचित रूप से समन्वित प्रणाली प्रदान करे, सुरक्षित करे तथा विकसित करे। कोई भी गतिविधि कुशलतापूर्वक उचित रूप से, पर्याप्त रूप से एवं किफायती रूप से नहीं चलायी जा सकती जब तक कि वह व्यवसायिक सिद्धान्तों पर नहीं चलायी जाती हो। जब कोई गतिविधि व्यवसायिक सिद्धान्तों पर चलायी जाती हो तो यह सामान्यतः लाभकारी होती है परन्तु कोई धर्मार्थ(पुन्यार्थ) गतिविधि के संचालन में यह संभव नहीं होगा कि व्यय आय को संतुलित करे और वहां कोई परिणामी लाभ नहीं हो। इसे प्राप्त करना न केवल व्यवहारिक प्राप्ति के लिये कठिन होगा बल्कि यह प्रबंधन के अनुचित सिद्धान्तों को प्रतिबिम्बित करेगा। धारा 22 क्या करती है, जब यह कहती है कि सड़क परिवहन निगम का यह सामान्य सिद्धान्त होगा कि अपने उपक्रमों का संचालन करते हुये वह व्यवसायिक सिद्धान्तों पर कार्य करेगा जो कि धारा 3 में दर्शाये गये है तथा जिसके लिये सड़क परिवहन निगम की स्थापना हुई है तथा उस तरीकों को निर्धारित करने के लिये जो कि धारा 18 में निगम के सामान्य कर्तव्य के रूप में दर्शाये गये है जिन्हें पूर्ण करने के लिये। (583 बी-एफ)

4. परीक्षण यह है कि ‘‘गतिविधियों का प्रमुख उद्देश्य क्या है- क्या धर्मार्थ उद्देश्यों के लिये इसका संचालन करना है या लाभ कमाने के लिये?’’ यदि प्रमुख उद्देश्य केवल धार्मिक प्रयोजन है तथा लाभ कमाना नहीं है तो ऐसा प्रयोजन इसके धार्मिक

स्वरूप (चरित्र) होने मात्र से ही निष्फल नहीं होगा कि इस गतिविधि से कुछ लाभ भी अर्जित हो रहा है। (583 एफ-जी)

5. प्रत्यर्थी-निगम की गतिविधि केवल लाभ कमाने के उद्देश्य के लिये नहीं है जो कि धारा 30 के प्रावधानों से पर्याप्त रूप से स्पष्ट है, जिसके तहत संशोधन अधिनियम, 1959 के द्वारा किये गये संशोधन से पूर्व धारा 33 में दर्शाये गये उद्देश्य के लिये शुद्ध लाभों के उपयोग के पश्चात शेष बची आय राज्य सरकार को सड़क विकास हेतु दे दी जाती थी तथा 1959 के संशोधन के पश्चात यह प्रत्यर्थी-निगम के विस्तार कार्यक्रमों के वित्त पोषण हेतु उपयोग में ली जाती है यदि कोई राशि शेष बच जाती है तो सरकार को सड़क विकास के उद्देश्य से सौंप दी जाती है सरकार को सौंपी गयी ऐसी राशि राज्य के सामान्य राजस्व का हिस्सा नहीं बनती बल्कि वह इस दायित्व के अधीन होती है कि इसका उपयोग केवल सड़क विकास के उद्देश्य हेतु ही किया जायेगा। (584 बी-डी)

आंध्र प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम बनाम आयकर अधिकारी, बी-1 बी-वार्ड, हैदराबाद और अन्य, (1964) 52 आईटीआर 524, 535-36; -(1964) 7 एससीआर 17, 29-30, अतिरिक्त आयकर आयुक्त, गुजरात बनाम सूरत आर्ट सिल्क क्लॉथ मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन (1980) 121 आईटीआर 1, 25-26, एससी, आयकर आयुक्त, बॉम्बे बनाम बार महाराष्ट्र परिषद (1981) 130 आईटीआर 28, 33-34, (एससी) निर्णयों पर भरोसा किया। ईन रि द ट्रस्टी ऑफ ट्रिब्यून; 1939 7 आईटीआर 415 पीसी रेफर किये।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील संख्या 216-218 (एनटी)/1973

उच्च न्यायालय आंध्र प्रदेश के 1970 के आरसी नंबर 14 में 3 दिसंबर, 1971 के निर्णय और आदेश से।

अपीलकर्ता के लिए एसटी देसाई और मिस ए. सुभाषिनी।

प्रतिवादी की ओर से एफएस नरीमन, बी. पार्थसारथी और टीए रामचंद्रन।

हस्तक्षेपकर्ताओं के लिए ओपी राणा, जीएस चटर्जी, एसके ढोलकिया, सीएसएस राव और राजू रामचंद्रन।

न्यायालय का निर्णय दिया गया, द्वारा-

मेडॉन, जे- उपरोक्त तीन अपीलें आयकर अधिनियम, 1961 की धारा 261 के तहत आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए प्रमाण पत्र द्वारा एक आयकर संदर्भ में उस उच्च न्यायालय के फैसले के खिलाफ दायर की गयी है। प्रत्यर्थी आंध्र प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम एक सड़क परिवहन निगम है जिसकी स्थापना 11 जनवरी, 1958 को आंध्र प्रदेश राज्य द्वारा सड़क परिवहन अधिनियम, 1950 (1950 का अधिनियम संख्या 1964) की धारा 3 के तहत जारी एक अधिसूचना के तहत की गयी थी (इसके बाद संक्षेप में इसे आरटीसी अधिनियम के रूप में संदर्भित किया जा रहा है) प्रत्यर्थी निगम की स्थापना से पहले आंध्र प्रदेश राज्य में सड़क परिवहन सरकार का एक विभाग था जिसे आंध्र प्रदेश राज्य के गठन से पहले हैदराबाद सरकार द्वारा, उसके बाद आंध्र प्रदेश सरकार द्वारा चलाया जाता था इस पूरी अवधि के दौरान सड़क परिवहन से होने वाली आय आयकर से मुक्त थी प्रत्यर्थी निगम के गठन के बाद आयकर विभाग ने यह विचार किया कि प्रत्यर्थी निगम की आय आयकर के लिये उतरदायी थी और निर्धारण वर्ष 1958-59 व 1959-60 के लिये प्रत्यर्थी निगम की आय का आयकर हेतु आंकलन किया इसके बाद प्रत्यर्थी निगम ने आंधप्रदेश उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका दायर की जिसमें कहा गया कि उसके स्वामित्व वाली संपति और उससे अर्जित होने वाली आय संविधान के अनुच्छेद 289(1) के तहत केंद्रीय कराधान से छूट प्राप्त राज्य की संपति और आय थी परन्तु इस तर्क को खारिज कर दिया गया और रिट

याचिका भी उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गयी। इस न्यायालय ने प्रत्यर्थी निगम द्वारा दायर अपीलें भी खारिज कर दी गयी। इस न्यायालय के निर्णय में आंध प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम बनाम आयकर अधिकारी बी-1 बी-वार्ड हैदराबाद और अन्य, (1964) 52 आईटीआर 524, 535-536; एससी (1964) 4 एस सी आर 17, 29-30 तथा आरटीसी अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों का उल्लेख करने के बाद इस न्यायालय ने यह माना कि-

> "निगम की आय को राज्य की आय बनाने वाला कोई प्रावधान करना तो दूर, सभी प्रासंगिक प्रावधान निगम के अलग व्यक्तित्व को जोरदार ढंग से सामने लाते है और इस आधार पर आगे बढ़ते है कि व्यपारिक गतिविधि निगम द्वारा संचालित होती है तथा इसके परिणामस्वरूप होने वाली हानि निगम की लाभ एवं हानि होगी। जब हम यह प्रश्न तय कर रहे है कि क्या निगम द्वारा प्राप्त आय राज्य की आय है तो धारा 30 के प्रावधान के अनुसार राज्य सरकार को जो शेष राशि उसमें दर्शायी गयी है उसे सौंपने से कोई सहायता नहीं मिलती है। आय निस्संदेह निगम की आय है। धारा 30 के अनुसार यह आवश्यक है कि उस आय एक हिस्सा सड़क विकास के विशिष्ट उद्देश्य के लिये राज्य सरकार को सौंपा जाये। यह सुझाया या दर्शाया नहीं गया है कि ऐसी आय राज्य को सौंप दी जाती है तो यह राज्य के सामान्य राजस्व का हिस्सा बन जाती है। यह वह आय है जो एक दायित्व से प्रभावित होती है और जिसका उपयोग राज्य सरकार द्वारा केवल उस विशिष्ट उद्देश्य के लिये किया जा सकता है जिसके लिये उसे सौंपा गया है।"

अपने इस तर्क में असफल होने पर की उसकी आय संविधान की अनुच्छेद 289(1) आयकर से मुक्त थी, प्रत्यर्थी निगम ने निर्धारण वर्ष 1960-61, 1961-62 एवं 1962-63 के सम्बन्ध में रिटर्न दाखिल किया, जिसमें आय को शून्य दिखाया गया। निर्धारण वर्ष 1960-61 व 1961-62 के सम्बन्ध में हमारे समक्ष 1973 की सिविल अपील संख्या 216 व 217 (एनटी) का विषय है, इसने धारा 4(3)(प) के तहत आयकर से छूट का दावा किया है। भारतीय आयकर अधिनियम 1922 (इसके बाद इसे 1922 का अधिनियम के रूप में संदर्भित किया गया है) निर्धारण वर्ष 1962-63 के सम्बन्ध में जो हमारे समक्ष 1973 की सिविल अपील संख्या 218 (एनटी) का विषय है, इसने आयकर अधिनियम 1961 (इसके बाद इसे 1961 का अधिनियम के रूप में संदर्भित किया गया है) की धारा 11 के तहत छूट का दावा किया गया। छूट के लिये प्रत्यर्थी निगम के दावे को आयकर अधिकारी, कम्पनी सर्कल हैदराबाद द्वारा खारिज कर दिया गया। प्रत्यर्थी निगम द्वारा दायर अपीलों को सहायक अपीलीय आयकर आयुक्त डी-रेंज हैदराबाद द्वारा स्वीकार किया गया लेकिन आयकर अपीलीय अधिकरण हैदराबाद बेंच के समक्ष विभाग द्वारा दायर अपील को अधिकरण ने स्वीकार कर लिया। प्रत्यर्थी निगम के उद्वरण पर अधिकरण ने तीनों अपीलों में एक सामान्य आदेश द्वारा एक मामला बताते हुये कानून के निम्नलिखित प्रश्न को उच्च न्यायालय को संदर्भित किया।

> ''क्या प्रकरण के तथ्य और परिस्थितियों के आधार पर निर्धारण वर्ष 1960-61 एवं 1961-62 के लिये निर्धारिती की आय आयकर अधिनियम की धारा 4(3)(i) के तहत आयकर से मुक्त थी तथा निर्धारण वर्ष 1962-63 के लिये आयकर अधिनियम की धारा 11 के तहत आयकर से मुक्त थी''

उच्च न्यायालय ने उपरोक्त प्रश्न का उत्तर प्रत्यर्थी निगम के पक्ष में और विभाग के विरूद्ध दिया और अपीलकर्ता के आवेदन पर आयकर आयुक्त आंध्र प्रदेश हैदराबाद ने

1961 के अधिनियम की धारा 261 के तहत इस न्यायालय ने अपील हेतु फिट होने का प्रमाण-पत्र प्रदान किया।

1922 के अधिनियम की धारा 4(3)(i), जो हमारे उद्देश्य के लिये प्रासंगिक नहीं है उसे विलोपित करते हुये निम्नानुसार प्रावधान किया गया है जो इस प्रकार हैः-

'3. निम्नलिखित वर्गों के अंतर्गत आने वाले कोई भी व्यक्ति की आय, लाभ या प्राप्ति को उन्हें प्राप्त करने वाले व्यक्ति की कुल आय में शामिल नहीं किया जायेगा-

(1) धारा 16 की उपधारा (1) के खण्ड सी के प्रावधानों के अधीन पूर्ण रूप से धार्मिक या पुन्यार्थ उद्देश्यों के लिये ट्रस्ट या अन्य कानूनी दायित्वों के तहत रखी गयी संपति से प्राप्त कोई भी आय जहां तक ऐसी आय धार्मिक या पुन्यार्थ उद्देश्यों के लिये लागू होती है जो कर योग्य क्षेत्रों के भीतर किये गये किसी कार्य से सम्बन्धित है केवल ऐसे उद्देश्यों के लिये आंशिक रूप से रखी गयी संपत्ति के मामले में आय लागू की गयी या अंतिम रूप से लागू करने हेतु अलग की गयी है।

बशर्ते कि ऐसी आय कुल आय में शामिल की जायेगीः-

x x x x

(B) किसी धार्मिक या पुन्यार्थ संस्था की ओर से किये गये व्यवसाय से प्राप्त आय के मामले में जब तक की आय पुरी तरह से संस्था के प्रयोजनों के लिये लागू नहीं की जाती है या तो-

(i) व्यवसाय का संचालन संस्था के प्राथमिक उद्देश्य को वास्तविक रूप से पूरा करने के दौरान किया जाता है या

(ii) व्यवसाय के सम्बन्ध में कार्य मुख्य रूप से संस्था के लाभार्थियों द्वारा किया जाता होः

x x x x

इस उप-धारा में धर्मार्थ उद्देश्य में गरीबों को राहत, शिक्षा, चिकित्सा सहायता तथा जन-उपयोगिता के किसी अन्य विषय की प्रगति शामिल है लेकिन खण्ड (i) या (ii) में उल्लेखित कोई भी बात शामिल नहीं है जो कि निजी धार्मिक उद्देश्य के लिये ट्रस्ट या विधिक दायित्वों हेतु रखी गयी सम्पति से आय का हिस्सा है जो कि जनता के लाभ को सुरक्षित नहीं करती हो।

1961 के अधिनियम की धारा 11(1)(a) के सारभूत प्रावधान इस प्रकार हैः-

"11 पुन्यार्थ या धर्मार्थ प्रयोजन हेतु रखी गयी संपत्ति से आयः-

(1) धारा 60 से 63 के प्रावधान के अधीन किसी व्यक्ति द्वारा आय प्राप्त करने पर उसकी पिछले वर्ष की आय में निम्नलिखित आय शामिल नहीं की जायेगी-

(a) पूरी तरह से पुन्यार्थ या धर्मार्थ उद्देश्यों के लिये ट्रस्ट के तहत रखी गयी संपत्ति से प्राप्त आय, जिस सीमा तक ऐसी आय भारत में ऐसे उद्देश्यों के लिये लागू की जाती है....."

1961 के अधिनियम की धारा 2 का खण्ड का (15) पुन्यार्थ प्रयोजन (उद्देश्य) की अभिव्यक्ति को परिभाषित करता है जो परिभाषा इस प्रकार हैः-

"15 पुन्यार्थ प्रयोजन" में गरीबों को राहत, शिक्षा, चिकित्सा राहत तथा सामान्य जन-उपयोगिता के किसी विषय की वृद्धि शामिल है जिसमें लाभ के लिये कोई गतिविधि शामिल नहीं है।

धर्मार्थ उद्देश्य अभिव्यक्ति की परिभाषा के सम्बन्ध में 1922 के अधिनियम और 1961 के अधिनियम के मध्य अंतर अतिरिक्त आयकर आयुक्त गुजरात बनाम सूरत आर्ट सिल्क क्लॉथ मैन्युफैक्चरर्स

एसोसिएशन (1980) 121 आईटीआर 1, 25-26, एस सी के मामले में इस न्यायालय द्वारा इस प्रकार बतलाया गया था कि-

‘‘यह स्पष्ट है कि बहिष्करण खण्ड को ट्रिब्यून के मामले (1939) 7 आईटीआर 415 में प्रिवी काउंसिल के निर्णय को विजित करने की दृष्टि से जोड़ा गया था, जहां यह माना गया था कि समुदाय को शिक्षित जन मत के अंग की आपूर्ति करने के उद्देश्य से किसी समाचार पत्र का प्रकाशन सामान्य जन-उपयोगिता का विषय था और इसलिये इसका स्वरूप भी धर्मार्थ था भले ही समाचार पत्र के प्रकाशन की गतिविधि लाभ कमाने के उद्देश्य से व्यापारिक आधार पर की जाती थी समाचार पत्र का प्रकाशन ट्रस्ट द्वारा अपने धर्मार्थ प्रयोजन को पूरा करने के उद्देश्य से की गयी एक गतिविधि थी जिसका प्रमुख उद्देश्य लाभ कमाना था फिर भी इसे न्यायिक समिती द्वारा यह माना गया था कि चूंकि इसका उद्देश्य सामान्य जन-उपयोगिता का विषय था अतः यह एक धर्मार्थ प्रयोजन था। वित्त मंत्री के भाषण से यह स्पष्ट है कि इस निर्णय को शून्य करने के उद्देश्य से ही धमार्थ प्रयोजन की परिभाषा में बहिष्करणीय खण्ड जोड़ा गया था इसलिये अब जो परीक्षण लागू किया जाना है कि क्या सामान्य जन-उपयोगिता के उद्देश्य को पूरा करने मे शामिल गतिविधि का प्रमुख उद्देश्य धार्मिक उद्देश्य की पूर्ति करना है या लाभ कमाना है जहां लाभ कमाना ही गतिविधि का प्रमुख उद्देश्य है तो ऐसा उद्देश्य हालांकि सामान्य जन-उपयोगिता का विषय है पर एक धर्मार्थ उद्देश्य नहीं रह जायेगा लेकिन जहां गतिविधि का प्रमुख उद्देश्य धर्मार्थ उद्देश्य को पूरा करना है और लाभ कमाना नहीं है तो यह धर्मार्थ उद्देश्य के अपने स्वरूप को केवल

इसलिये नहीं खो देगा कि इस गतिविधि से कुछ लाभ भी अर्जित होता है। बहिष्करणीय खण्ड के लिये कोई आवश्यक नहीं है कि गतिविधि को इस तरह से जारी रखा जाये कि इससे कोई लाभ न हो। किसी ट्रस्ट या संस्था के प्रभारी व्यक्तियों के लिये ऐसी गतिविधि जारी रखना वास्तव में कठिन होगा कि व्यय आय को संतुलित कर दे और परिणामस्वरूप कोई लाभ न हो। यह न केवल व्यावहारिक कार्यान्वन के लिये कठिन होगा बल्कि प्रबंधन के अनुचित सिद्धान्तों को भी प्रतिबिंबित करेगा।''

उपरोक्त मामले में बतायी गयी स्थिति को इस न्यायालय द्वारा आयकर आयुक्त बाम्बे बनाम बार काउंसिल ऑफ महाराष्ट्र, (1981) 130 आईटीआर 28, 33-34, एससी में दोहराया गया व इस प्रकार बताया कि-

''यह देखा जा सकता है कि जब सामान्य जन-उपयोगिता के किसी विषय को 1922 के अधिनियम में धर्मार्थ उद्देश्य की परिभाषा में शामिल किया गया था तो वर्तमान परिभाषा में प्रतिबंधात्मक शब्द 'लाभ के लिये किसी भी गतिविधि को शामिल नहीं करना' शामिल किया गया जो धर्मार्थ प्रयोजन के अंतिम प्रमुख शीर्ष को शासित करे। सीआइटी बनाम आंध प्रदेश चैम्बर ऑफ कैमर्स (1965) 55 आईटीआर 722 के मामले में इस न्यायालय द्वारा 1922 के एक्ट के तहत यह तय किया गया कि जहां प्रतिबंधात्मक शब्द अनुपस्थित थे तो इस न्यायालय ने यह निर्धारित किया कि यदि किसी ट्रस्ट या संस्था का प्राथमिक या प्रमुख उद्देश्य धर्मार्थ था तो कोई अन्य विषय जो धर्मार्थ नहीं हो परन्तु प्राथमिक या प्रमुख उद्देश्य के लिये केवल सहायक या आकस्मिक हो तो ट्रस्ट या संस्था को वैध धर्मार्थ संस्था होने से नहीं

रोका जा सकेगा। 1961 के अधिनियम की परिभाषा में प्रतिबंधात्मक शब्द जोड़ने के बाद इस न्यायालय ने अतिरिक्त सीआईटी बनाम सूरत आर्ट सिल्क क्लॉथ मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन (1980) 121 आईटीआर के मामले में पुष्टि की गयी कि किसी ट्रस्ट या संस्था के प्राथमिक या प्रमुख उद्देश्य का पूर्वोक्त परीक्षण अभी भी सही है कि प्रतिबंधात्मक शब्द उद्देश्य को अर्हित करते है न कि उन्हें पूर्णता प्रदान करते हैं प्रतिबंधात्मक शब्दों का सही अर्थ यह है कि जब किसी ट्रस्ट या संस्था का उद्देश्य सामान्य जन-उपयोगिता के किसी विषय की प्रगति करना था तो यह सामान्य जन-उपयोगिता का उद्देश्य ही कहलायेगा इसके लिये यह जरूरी नहीं है कि वह लाभ की गतिविधि नहीं चलाये इन परीक्षणों को लागू करते हुये आंध प्रदेश चैम्बर ऑफ कॉमर्स और सूरत आर्ट सिल्क क्लॉथ मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन जैसे व्यापारिक निकायों को सामान्य जन-उपयोगिता के विषय को आगे बढ़ाने की दृष्टि से गठित हुआ संस्थान माना गया क्योंकि उनका प्राथमिक या प्रमुख उद्देश्य उद्योगों को बढ़ावा देना या उनकी रक्षा करना था। व्यापार और वाणिज्य या आम तौर पर कुछ वस्तुओं में भले ही उनकी कुछ गतिविधियों के माध्यम से कुछ लाभ उनके सदस्यों को प्राप्त हुआ हो जिसे आकस्मिक माना गया और इस न्यायालय ने माना कि इन संस्थानों द्वारा विभिन्न स्रोतों से प्राप्त आय (आंध प्रदेश चैम्बर ऑफ कॉमर्स के मामले में सम्पत्ति से प्राप्त किराये की आय तथा इसके सदस्यों से संग्रहित वार्षिक सदस्यता शुल्क की आय तथा विदेशी यार्न के आयात हेतु लाइसेंस के मूल्य पर निर्धारित प्रतिशत की कमीशन की आय तथा सूरत आर्ट सिल्क क्लॉथ मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन के

मामले में व्यवहारी द्वारा अपने सदस्यों से स्वदेशी यार्न के क्रय के कोटे से हुयी आय) अधिनियम की धारा 11 के तहत कर से मुक्त थी।''

अपीलकर्ता की और से यह तर्क दिया गया है कि प्रतिवादी निगम किसी भी छूट का हकदार नही था जैसा कि उसने दावा किया था क्योंकि उसकी गतिविधिया लाभ के लिए चल रही थी जैसा की आरटीसी अधिनियम की धारा 22, 23 व 28 में दिखाया गया है। अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता की निष्पक्षता में यह कहा जाना चाहिये की "इन री द ट्रस्टी आफ ट्रिब्यून (1939) आईटीआर-415" में प्रिवी कान्सील की न्यायिक समिति द्वारा यह माना गया कि सामान्य जन उपयोगिता के उद्वेश्य से की गई कोई गतिविधी अपने धमार्थ स्वरूप को समाप्त नहीं कर देती, भले ही लाभ कमाने के उद्वेश्य से वाणिज्यिक गतिविधि संचालित की गई हो। निर्धारण वर्ष 1962-63 के संबंध में दावा की गई छूट जो 1962 के अधिनियम द्वारा कवर की गई थी पर ही हमला करने पर ध्यान था उपरोक्त विवाद में आरटीसी अधिनियम के प्रांसगिक प्रावधानों की जांच शामिल है। राज्य सरकार द्वारा जिन उद्वेश्यो के लिए सडक परिवहन निगम की स्थापना की गई है उन्हें धारा 3 में निर्धारित किया गया है जो उद्वेश्य इस प्रकार हैः-

(a) सडक परिवहन के विकास से जनता, व्यापार व उद्योग को लाभ प्रदान करना।

(b) किसी भी प्रकार के सडक परिवहन को किसी अन्य प्रकार के परिवहन के साथ समन्वित करने की वांछनीयता तथा

(c) किसी भी क्षेत्र में सडक परिवहन के लिय सुविधाओं का विस्तार व सुधार करने के लिये वहां सडक परिवहन सेवा की एक कुशल और किफायती प्रणाली प्रदान करने की वांछनीयता।

इसलिये यह वे उद्वेश्य थे जिनके लिये प्रत्यर्थी निगम की स्थापना की गई थी। धारा 18 उपरोक्त उद्वेश्य को दौहराती है जो इस प्रकार हैः-

"18. निगम का सामान्य कर्तव्य -

निगम का यह सामान्य कर्तव्य होगा की वे राज्य या राज्य के किसी भी हिस्से में सडक परिवहन सेवाओं की कुशल, पर्याप्त किफायती और उचित रूप से समन्वित प्रणाली प्रदान करने या सुरक्षित करने या बढावा देने के लिये अपनी शक्तियों का उत्तरोतर प्रयोग करें जिसके लिए इसे स्थापित किया गया है तथा किसी क्षेत्र में विस्तृत किया गया है।

x x x

धारा 19- सडक परिवहन निगम की शक्तियों का वर्णन करती है। इनमे राज्य या किसी भी विस्तारित क्षेत्र में सडक परिवहन सेवाओं को संचालित करने ओर किसी भी सहायक सेवा प्रदान करने की शक्ति शामिल है। धारा 22 के प्रावधान इस प्रकार हैः-"

धारा-22 निगम के वित्त का सामान्य सिद्वान्त - निगम का यह एक सामान्य सिद्वान्त होगा कि अपने उपक्रम को आगे बढाने में वह व्यवसायिक सिद्वान्तों पर कार्य करेगा।

धारा-23 की उपधारा (1) के अन्तर्गत सडक परिवहन निगम की पूंजी केन्द्र सरकार व राज्य सरकार द्वारा ऐसे अनुपात में प्रदान की जायेगी जिस पर दोनों सरकारें सहमत हो। धारा 23 की उपधारा (2) के अन्तर्गत जहां सडक परिवहन निगम को पूंजी केन्द्र या राज्य सरकार द्वारा प्रदत्त नहीं कराई जाती है तो निगम शेयर जारी करके ऐसी पूंजी जुटा सकता है जिसके लिये उसे राज्य सरकार के द्वारा अधिकृत किया जा सकता

है। धारा 23 की उपधारा (3) के अन्तर्गत शेयरो में अंशदान केन्द्र सरकार व राज्य सरकार व उन व्यक्तियों सहित अन्य पार्टियों द्वारा की जानी है जिनके उपक्रम निगम द्वारा अधिकृत किये गये है व उपधारा 6 के तहत निगम किसी भी समय राज्य सरकार की पूर्व मंजूरी से अन्य पार्टियों को जारी किये गये शेयरों को ऐसे तरीके से भुना सकता है जो निर्धारित किया जावे। धारा 24 के तहत यदि ऐसे शेयरों के जारी होने के बाद निगम को अतिरिक्त पूंजी की आवश्यकता होती हो ता वह राज्य सरकार की पूर्व मंजूरी से नये शेयरों को जारी करके ऐसे अतिरिक्त पूंजी जुटा सकता है। तथा धारा 23 के प्रावधान ऐसे निर्गमन पर लागू होते है। धारा 25 के तहत सडक परिवहन निगम के शेयरों के मूल घन व वार्षिक लाभांश दोनो के भुगतान के लिये राज्य सरकार द्वारा ऐसी न्यूनतम दर पर गांरटी दी जानी है जो राज्य सरकार द्वारा तय कर शेयर जारी करते समय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा प्रकाशित की जा सकती हो। धारा 26 सडक परिवहन निगम को राज्य सरकार की पूर्व मंजूरी से अपने कार्यशील पूंजी बढाने या पूंजीगत प्रकृति के किसी भी व्यय को पूरा करने के लिए खुले बाजार मे उधार लेने के लिये अधिकृत करती है। धारा 27 में प्रावधान है कि प्रत्येक सडक परिवहन निगम का अपना कोष होना चाहिये और निगम की सभी प्राप्तियां उसमें रखी जानी चाहिये ओर निगम द्वारा सभी भुगतान उसी से किये जाने चाहिये और राज्य सरकार द्वारा अन्यथा निदेशित किये जाने के अलावा उन निधि से संबंधित सभी धन भारतीय रिजर्व बैंक में या उसके ऐजेन्टो के पास जमा किये जाने है या ऐसी प्रतिभूतियों में निवेश किये जाने है जो राज्य सरकार द्वारा अनुमोदित हो। धारा 28 के तहत जहां सडक परिवहन की पूंजी केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा प्रदान की जानी हो तो निगम को ऐसी पूंजी पर ब्याज का भुगतान करना होता है और जहां निगम ने शेयर जारी करके अपनी पूंजी जुटाई है वहा उसे लाभांश का भुगतान उन सामान्य सीमाओं के अधीन जो राज्य सरकार द्वारा केन्द्र

सरकार से विमर्श करके अधिरोपित किये जाये तथा उन शेयर्स पर ऐसी दर पर जो समय समय पर निगम द्वारा तय की जाये, करना होता है।

30. शुद्ध लाभ का निपटानः-

धारा 28 के तहत ब्याज और लाभांश के भुगतान और धारा 29 के तहत मूल्याह्रास, रिजर्व और अन्य निधियों के लिये प्रावधान करने के बाद निगम अपने शुद्ध वार्षिक लाभ के ऐसे प्रतिशत का उपयोग कर सकता है जो राज्य सरकार द्वारा इस सम्बन्ध में निर्दिष्ट किया जाय। सड़क परिवहन सेवाओं का उपयोग करने वाले यात्रियों के लिये सुविधाओं का प्रावधान, निगम द्वारा नियोजित श्रमिकों का कल्याण और ऐसे अन्य उद्देश्यों के लिये जो केंद्र सरकार की पूर्व मंजूरी के साथ निर्धारित किये जा सकते हैं, (और शेष राशि में से जितनी हो सके, के साथ) निगम द्वारा इस सम्बन्ध में निर्दिष्ट राज्य सरकार और केंद्र सरकार की पिछली मंजूरी का उपयोग निगम के विस्तार कार्यक्रमों के वित्तपोषण के लिये किया जा सकता है और शेष, यदि कोई हो, को राज्य सरकार को सड़क विकास के उद्देश्य हेतु सौंप दिया जाएगा।

सडक परिवहन निगम संशोधन अधिनियम, 1959 (1959 का अधिनियम संख्या 28) द्वारा धारा 30 में कोष्ठक भाग में ''और सड़क विकास के प्रयोजन के लिए शेष राशि राज्य सरकार को सौंपी जाएगी'' शब्दों को प्रतिस्थापित किया गया था।

यह विवादित नहीं था कि प्रत्यर्थी निगम द्वारा की गई गतिविधि का उद्देश्य सामान्य जन उपयोगिता में से एक था। जो प्रस्तुत किया गया वह यह था कि इस तरह की गतिविधि लाभ के लिए की गई थी। जैसा कि धारा 22 द्वारा दिखाया गया है। जिसके तहत प्रत्यर्थी निगम को व्यावसायिक सिद्धांतों पर कार्य करने का आदेश दिया गया था। आगे यह प्रस्तुत किया गया कि प्रत्यर्थी निगम जनता के सदस्यों को भी शेयर जारी कर सकता है और लाभांश का भुगतान शेयर धारकों को किया जाएगा और

इसलिए, प्रत्यर्थी निगम की गतिविधि से उसके मालिकों, अर्थात् शेयरधारकों द्वारा लाभ कमाया जाएगा। हम इन प्रस्तुतियों को स्वीकार करने में असमर्थ हैं।

धारा 22 पर आधारित प्रस्तुतिकरण उस धारा में क्या प्रदान किया गया है इसकी गलतफहमी पर आधारित है। सड़क परिवहन निगम से घाटे में चलाने की उम्मीद या अपेक्षा नहीं की जा सकती है। इसकी स्थापना यात्रियों और माल के परिवहन के मामले में जनता को सब्सिडी देने के उद्देश्य से नहीं की गई है। सड़क परिवहन निगम की स्थापना के उद्देश्य आरटीसी अधिनियम की धारा 3 में निर्धारित हैं जिन्हें हम पहले ही ऊपर प्रस्तुत कर चुके हैं। धारा 18 से पता चलता है कि राज्य में सड़क परिवहन सेवाओं की एक कुशल, पर्याप्त, किफायती और उचित रूप से समन्वित प्रणाली प्रदान करना, सुरक्षित करना और बढ़ावा देना सड़क परिवहन निगम का कर्तव्य है। कोई भी गतिविधि कुशलतापूर्वक, ठीक से, पर्याप्त रूप से या आर्थिक रूप से तब तक नहीं की जा सकती जब तक कि उसे व्यावसायिक सिद्धांतों पर नहीं चलाया जाता। यदि कोई गतिविधि व्यावसायिक सिद्धांतों पर की जाती है, तो इसका परिणाम आम तौर पर लाभ होगा, लेकिन जैसा कि सूरत आर्ट सिल्क क्लॉथ मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन मामले में इस न्यायालय द्वारा बताया गया है, यह संभव नहीं है कि एक धर्मार्थ गतिविधि को जारी रखा जाए ताकि व्यय आय को संतुलित कर सके और इसका कोई पारिणामिक लाभ नहीं हो, क्योंकि इसे प्राप्त करना न केवल व्यावहारिक रूप से कठिन होगा बल्कि प्रबंधन के अनुचित सिद्धांतों को प्रतिबिंबित करेगा। इसलिए, धारा 22 क्या करती है जब यह कहती है कि यह एक सड़क परिवहन निगम का सामान्य सिद्धांत होगा कि अपने उपक्रमों को चलाने में यह व्यावसायिक सिद्धांतों पर कार्य करेगा जो धारा 3 में दर्शाये गये है जिसके लिए सड़क परिवहन निगम स्थापित किया गया है और उस तरीके को निर्धारित किया गया है जिसमें धारा 18 में निर्धारित निगम के सामान्य कर्तव्य का पालन किया जाना है। सूरत आर्ट क्लॉथ मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन मामले और बार

काउंसिल ऑफ महाराष्ट्र मामले में इस न्यायालय के निर्णयों से अब यह दृढ़ता से स्थापित हो गया है कि परीक्षण यह है कि "गतिविधि का पूर्व-प्रमुख उद्देश्य क्या है क्या वह एक धर्मार्थ उद्देश्य को पूरा करना है या लाभ कमाने के लिए?" यदि पूर्व-प्रमुख उद्देश्य एक धर्मार्थ उद्देश्य को पूरा करना हो और लाभ कमाना नहीं है, तो उद्देश्य केवल इसलिए अपना धर्मार्थ चरित्र नहीं खो देगा क्योंकि गतिविधि से कुछ लाभ उत्पन्न होता है।

धारा 23(2) और आरटीसी अधिनियम की अन्य धाराओं के आधार पर प्रस्तुतीकरण का कोई तथ्यात्मक आधार नहीं है, जो सड़क परिवहन निगम को जनता के सदस्यों को शेयर जारी करने और उस पर लाभांश का भुगतान करने सहित शेयर जारी करने का अधिकार देता है। यह एक स्वीकृत स्थिति है, जैसा कि उच्च न्यायालय ने अपील के तहत अपने फैसले में बताया है कि धारा 23(2) के तहत कोई शेयर पूंजी नहीं जुटायी गयी है और संपूर्ण पूंजी धारा 23(1) के तहत सरकार द्वारा प्रदान की गयी है और सरकार को उस पर केवल धारा 28(1) के तहत ब्याज का भुगतान किया जाता है। जैसे कि ऋण के रूप में देय किसी भी धन पर ब्याज का भुगतान किया जाता है प्रत्यर्थी निगम की गतिविधि लाभ कमाने के उद्देश्य से नहीं की जाती है, यह धारा 30 के प्रावधानों द्वारा पूरी तरह से स्पष्ट किया गया है जिसके तहत 1959 के संशोधन अधिनियम द्वारा उस धारा में संशोधन से पहले शेष आय थी। धारा 30 में निर्धारित उद्देश्यों के लिये शुद्ध लाभ का उपयोग, सड़क विकास के उद्देश्य से राज्य सरकार को सौंपा जाना था और 1959 के संशोधन अधिनियम के बाद प्रत्यर्थी निगम के विस्तार कार्यक्रम के वितपोषण के लिये उपयोग किया जाना था और शेष, यदि कोई हो, सड़क विकास के प्रयोजन के लिये राज्य सरकार को सौंपा जाना है। जैसा कि आंध्र प्रदेश सड़क परिवहन निगम बनाम आयकर अधिकारी, बीआईबी-वार्ड, हैदराबाद और अन्य में इस न्यायालय द्वारा बताया गया है कि राज्य सरकार को सौंपी गयी राशि राज्य के

सामान्य राजस्व का हिस्सा नहीं है बल्कि इस दायित्व से प्रभावित है कि इसका उपयोग केवल उसी उद्देश्य के लिये किया जाना चाहिए जिसके लिये इसे सौंपा गया है अर्थात् सड़क विकास हेतु। इसमें न तो कोई विवाद है और न ही इसे नकारा जा सकता है कि सड़क विकास आम जनता की उपयोगिता का विषय है।

उपर दिये गये कारणों से, हम पाते है कि प्रत्यर्थी निगम 1922 के अधिनियम और 1961 के अधिनियम दोनों के तहत दावा की गयी छूट का हकदार था।

परिणामस्वरूप यह अपील विफल हो जाती है और जुर्माने के साथ खारिज की जाती है।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी सुकेश कुमार जैन (आर. जे. एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।